एडवर्ड मिल्स कंपनी लिमिटेड ब्यावर और अन्य

बनाम

अजमेर राज्य और अन्य

माननीय न्यायाधीपतिगण मेहरचंद महाजन (सी.जे.), श्री मुखर्जी, श्री विवियन बोस, श्री जगन्नाथ दास, श्री वेंकटरामा अय्यर

भारत सरकार अधिनियम 1935 की धारा 94(3)के तहत किया गया आदेश- क्या "कानून लागू" और अनुकुलन में सक्षम है- न्यूनतम मजदूरी अधिनियम 1948 (1948 का अधिनियम गप) धारा 27-"उपर्युक्त सरकार" अनुसूची के किसी भी हिस्से में जोड़ने की शक्ति दी गई है- कोई भी रोजगार जिसके संबंध में मजदूरी की न्यूनतम दरे निर्धारित की जानी चाहिए। ऐसी शक्ति जो असंवैधानिक ना हो और अनुमेय प्रत्यायोजन सलाहकार समिति की सीमाओं के भीतर हो- अधिनियम की धारा 5 के अधीन नियुक्ति- पहले से ही समाप्त अवधि से परे इसकी अवधि का विस्तार- वैधता- प्रक्रियात्मक अनियमितताऐं, अंतिम रिपोर्ट को प्रभावित करती है।

संविधान के अनुच्छेद 372 में प्रयुक्त शब्द "लागू कानुन" न केवल एक विधायी अधिनियमन बल्कि किसी भी विनियमन या आदेश को शामिल करने के लिए पर्याप्त व्यापक है, जिसमें कानून का बल है।

गर्वनर जनरल द्वारा भारत सरकार अधिनियम, 1935 की धारा 94(3) के तहत किया गया एक आदेश, मुख्य आयुक्त को किसी प्रांत को प्रशासित करने के अधिकार के साथ निवेश करना वास्तव में एक विधायी प्रावधान की प्रकृति में है। जो उस प्रांत के संबंध में मुख्य आयुक्त के अधिकारों और शक्तियो को परिभाषित करता है। ऐसा आदेश संविधान के अनुच्छेद 372 के दायरे में आता हैं और संविधान के प्रांरम्भ होने से ठीक पहले "लागू कानून" होने के नाते अनुच्छेद के खंड (1) के तहत लागू रहेगा। इस तरह का आदेश संवैधानिक प्रावधानों के अनुरूप लाने के लिए अनुकूलन करने में सक्षम है। और कानून अनुकूलन आदेश 1950 द्वारा ठीक यही किया गया है। इस लिए भारत सरकार अधिनियम 1935 की धारा94(3) के तहत किये गये आदेश को अब संविधान के अनुच्छेद 239 के तहत किये गये आदेश के रूप में माना जाना चाहिए और अनुकूलन आदेश बनाना अनुच्छेद 372 के खंड (2) के तहत राष्ट्रपति की क्षमता के भीतर था।

न्यूनतम मजदूरी अधिनियम 1948 की धारा 27 के अधीन "उपर्युक्त सरकार" को यह शक्ति दी गई है की वह अनुसूची के किसी भी भाग में ऐसे किसी रोजगार को जोड़ सकती है। जिसके संबंध में उसकी यह राय हो की न्यूनतम मजदूरी किसी विशेष रीति से अधिसूचना देकर निर्धारित की जाऐगी और उसके बाद वह योजना, राज्य को अपने आवेदन में, तद्नुसार

संशोधित माना जाए। अधिनियम की धारा 27 के उपबंधों में प्रत्यायोजन का एक तत्व निहित हैं, क्योंकि विधानमंडल, एक अर्थ में, अपने द्वारा विनिर्दिष्ट किसी अन्य निकाय को कुछ ऐसा करने के लिए अधिकृत करता है जो वह स्वयं कर सकता है। लेकिन इस तरह के प्रतिनिधिमंडल, यदि इसे बुलाया जा सकता है, तो यह अनुचित और असंवैधानिक नहीं है। और यह अनुमेय प्रतिनिधिमंडल की सीमाओं को पार नहीं करता है।

वर्तमान अधिनियमन के चेहरे पर विधायी नीति स्पष्ट है। इसका उद्देश्य न्यूनतम मजदूरी का सांविधिक निर्धारण करना है ताकि श्रमिकों के शोषण की संभावनाओ को कम किया जा सके। अध्निियमन के परियोजनों को प्रभावी ढंग से कार्यान्वित करने के लिए उपर्युक्त सरकार को यह शक्ति दी गई है कि वह स्थानीय परिस्थितियों के संदर्भ में यह निर्णय ले सके कि क्या यह वांछनीय है कि किसी विशेष व्यापार या उधोग के संबंध में न्यूनतम मजदूरी निर्धारित की जानी चाहिए जो पहले से ही सूची में शामिल नहीं है।

इसलिए धारा 27 को अधिनियमित करने में विधायिका ने अपनी आवश्यक शक्तियों को नहीं छीना है या प्रशासनिक प्राधिकरण को एक सहायक या अधीनस्थ शक्ति के अलावा कुछ भी नहीं सांेपा है जिसे अधिनियम के उद्देश्य और नीति को पूरा करने के लिए आवश्यक समझा गया था।

अधिनियम की धारा 30 के तहत बनाये गये नियमों के नियम 3 में राज्य सरकार को अधिनियम की धारा 5 के तहत नियुक्त समिति का कार्यकाल तय करने और परिस्थितियों की आवश्यकता के अनुसार समय समय पर इसे बढाने का अधिकार दिया गया है।

मूल रूप से तय की गई अवधि समाप्त हो गई थी। और बाद में इसकी अवधि बढा दी गई थी। इसने काम नहीं किया और इस अवधि के दौरान रिपोर्ट प्रस्तुत नहीं की। यह मानते हुए कि बाद का आदेश एक समिति को पुनर्जीवित नहीं कर सकता है। जो पहले ही मर चुकी थी, एक नई समिति का गठन किया जा सकता है, और उसके द्वारा प्रस्तुत रिपोर्ट पूरी तरह से अच्छी रिपोर्ट होगी। इसके अलावा, एक समिति केवल एक सलाहकार निकाय है और इस चरित्र की प्रक्रियात्मक अनियमितताएंे न्यूनतम मजदूरी तय करने वाली अंतिम रिपोर्ट को दूषित नहीं कर सकती है।

बैक्सटर बनाम आह वे(8 सी.एल. आर. 626) और रेग बनाम बुराह (3 ।चचण् बंे.889) का उल्लेख किया गया है।

सिविल अपीलीय क्षैत्राधिकार: सिविल अपील संख्या 138,139/1954

भारत के संविधान के अनुच्छेद 132 और 133 के तहत न्यायिक आयुक्त न्यायालय, अजमेर के दिनांक 16.02.1953 के निर्णय और आदेश से 1952 की सिविल विविध याचिक संख्या 260 और 263 में अपील।

1954 के सी.ए. नंबर 138 (एडवर्ड मिल्स और कृष्णा मिल्स) में अपील कर्ता नंबर 1 और 2 के लिए एनसी चटर्जी,(बी.डी. शर्मा और नोनीत लाल, उनके साथ)

1954 (महालक्ष्मी मिल्स)के सी.ए. नंबर 138 में अपील कर्ता न.3 के लिए अछरू राम (बी.डी. शर्मा और नोनीत लाल उनके साथ)

1954 के सीए नंबर 139 में अपील कर्ता के लिए एच.एन. सीरवई, जे.बी. दादाचनजी और राजिंदर नारायण।

प्रत्यर्थी न. 2 (भारत संघ)के लिए भारत के सोलिसिटर जनरल सी.के. दफ्तरी (एम.एम.कोल और पी.जी. गोखले उनके साथ)।

14.10.1954 न्यायालय का निर्णय माननीय न्यायामूर्ति श्री मुखर्जी द्वारा पारित किया गया।

यह दोनों अपीले संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत दो समान याचिकाओं पर अजमेर के न्यायिक आयुक्त द्वारा पारित 16.02.1953 के एक आम फैसले के खिलाफ निर्देशित है जिनमें से एक में 1954 की अपील संख्या 138 में अपीलकर्ता याचिकाकर्ता थे। जबकी दूसरे अपीलकर्ता द्वारा 1954 की अपील सं. 139 में दायर किया गया था।

दोनो मामलों में याचिका कर्ताओं ने यह घोषणा करने के लिए प्रार्थना की कि अजमेंर राज्य सरकार द्वारा 7.10.1952 को जारी अधिसूचना, जिसमें न्यूनतम मजदूरी अधिनियम (1948 का अधिनियम गप के प्रावधानो के

तहत, उस राज्य के भीतर कपड़ा उधोग मे रोजगार के संबंध में मजदूरी की न्यूनतम दरे तय की गई है) अवैध और अधिकार से परे है। और प्रत्यर्थी को निर्देश देने के लिए परमादेश की प्रकृति में रिट जारी करने के लिए है। कि याचिकाकर्ताओं के खिलाफ इसे लागू नहीं करे।

हमारे सामने प्रचारित किये गये बिंदुओ की सराहना करने के लिए कालानुक्रमिक क्रम में भौतिक तथ्यों को संक्षेप में बताना सुविधाजनक होगा। 15.03.1948 को भारत के केंद्रीय विधानमंडल ने न्यूनतम मजदूरी अधिनियम 1948 नामक एक अधिनियम पारित किया, जिसका उद्देश्य, जैसा कि प्रस्तावना में कहा गया है।, कुछ रोजगारों मे मजदूरी की न्यूनतम दरों को निर्धारित करना है। अधिनियम से जुडी अनुसूची में दो भागों के अन्तर्गत उन रोजगारो को विनिर्दिष्ट किया गया है। जिनके संबंध में कर्मचारियो की न्यूनतम मजदूरी निर्धारित की जा सकती है। और धारा 27 ऐसा करने के अपने इरादे के बारे में तीन महीने की सूचना देने के बाद उपर्युक्त सरकार को अनुसूची के किसी भी भाग मे किसी अन्य रोजगार को जोडने के लिए अधिकृत करती है। जिसके संबंध में उसकी राय है की इस अधिनियम के अधीन मजदूरी की न्यूनतम दरे निर्धारित की जानी चाहिए। धारा 2 (ख) में यथा परिभाषित "उपयुक्त सरकार" का अर्थ है, केंद्र सरकार द्वारा या उसके प्राधिकार के अधीन किय गये रोजगार के अलावा किसी अनुसूचित रोजगार के संबंध में, राज्य सरकार धारा 3 के तहत "उपयुक्त

सरकार" अधिनियम के प्रारंभ में अनुसूची मे विर्निष्टि किसी भी रोजगार में नियोजित कर्मचारियो को देय न्यूनतम मजदूरी निर्धारित करता है। या इस अधिनियम की धारा 27 की उपधारा 1ए में अनुसूची में अन्य बातों के साथ साथ यह प्रावधान जोडा गया है कि उपर्युक्त सरकार किसी भी अनुसूचित रोजगार के संबंध में मजदूरी की न्यूनतम दरे निर्धारित करने से परहेज कर सकती है। जिसमें पूरे राज्य में ऐसे रोजगार में एक हजार से कम कर्मचारी कार्यरत है। धारा 5 में न्यूनतम मजदूरी निर्धारित करने की प्रक्रिया निर्धारित की गई हैं। उपर्युक्त सरकार न्यूनतम मजदूरी निर्धारित करने के मामले में सलाह देने के लिए जांच करने के लिए एक समिति नियंुक्त कर सकती है। वैकल्पिक रूप से, यह अधिकारिक सार्वजनिक राजपत्र में अधिसुचना द्वारा प्रभावित होने वाले व्यक्तियों की जानकारी के लिए अपने प्रस्तावों को प्रकाशित कर सकता है। समिति की सलाह या प्रस्तावो पर अभ्यावेदनों पर विचाार करने के बाद, जेसा भी मामला हो, "उपयुक्त सरकार" अधिकारिक राजपत्र में अधिसूचना द्वारा किसी भी अनुसूचित रोजगार के संबंध में मजदूरी की न्यूनतम दरों को निर्धारित करेगी। और ऐसी दरें जारी होने की तारीख से 3 महीने की समाप्ति पर लागू होगी। जबतक कि अधिसूचना अन्यथा निर्देश न दे। धारा 9 में अन्य बातों के साथ साथ यह प्रावधान है कि धारा 5 के अधीन गठित सलाहकार समिति में उपर्युक्त सरकार द्वारा नामित व्यक्ति शामिल होंगंे। समिति

में नियोक्ताओं और किसी अनुसूचित रोजगार में नियोजित लोगों के प्रतिनिधियों की समान संख्या होगी और स्वतंत्र व्यक्ति भी होंगे जो कुल संख्या के एक तिहाई से अधिक नहीं होंगे, जिनमें से एक को अध्यक्ष नियुक्त किया जाऐगा।

धारा 30 उपर्युक्त सरकार को अधिनियम के प्रयोजनों को कार्यान्वित करने के लिए नियम बनाने की शक्ति प्रदान करती है।

प्रारंभ में यह उल्लेख किया जा सकता है कि अधिनियम की अनुसूची के भाग प्रथम में उस समय रोजगार की केवल 12 मदों का उल्लेख किया गया था जब अधिनियम पारित किया गया था, और वस्त्र उधोग को रोजगार में शामिल नहीं किया गया था। 16.03.1949 को केंद्र सरकार ने भारत सरकार अधिनियम 1935 की धारा 94(3) के अधीन अपनी शक्तियों का प्रयोग करतें हुए एक अधिसूचना जारी की, जिसमें निर्देश दिया गया की न्यूनतम मजदूरी अधिनियम के अन्तर्गत "उपयुक्त सरकार" के कार्यो का प्रयोग प्रत्येक मुख्य आयुक्त के प्रांत के संबंध में मुख्य आयुक्त द्वारा किया जाएगा। 17.03.1950 को अजमेंर के मुख्य आयुक्त ने राज्य की "उपयुक्त सरकार" के रूप में कार्य करने का इरादा रखते हुए अधिनियम की धारा 27 के संदर्भ में एक अधिसूचना प्रकाशित की, जिसमें अनुसूची के भाग प्रथम में एक अतिरिक्त मद के रूप में टेक्सटाईल मिलो में रोजगार को शामिल करने के अपने इरादे के बारे में तीन महीने की सूचना दी गई

थी। 10.10.1950 को अंतिम अधिसूचना जारी की गई जिसमें कहा गया कि मुख्य आयुक्त ने निर्देश दिया था कि "टेक्सटाईल उधोग में रोजगार" अनुसूची के भाग प्रथम मे जोड़ा जाना चाहिए ।

23 नवम्बर, 1950 को मुख्य आयुक्त के सचिव के हस्ताक्षर से एक अन्य अधिसुचना प्रकाशित की गई जिसमें अधिनियमकी धारा 30 के तहत अपनी शक्तियों का प्रयोग करते हुए मुख्य आयुक्त द्वारा बनाए गए नियम शामिल थे। इनमें से, केवल नियम 3,8 और 9 हमारे वर्तमान उद्देश्य के लिए सामग्री है।नियम 3 में प्रावधान है कि सलाहकार समिति के सदस्यों की पदावधि ऐसी होगी, जो राज्य सरकार की राय में संबंधित अनुसूचित रोजगार की जांच पूरी करने के लिए आवश्यक है और राज्य सरकार, समितियों के गठन के समय, एक कार्यकाल निर्धारित कर सकती है। और समय समय पर, परिस्थितियों की आवश्यकता के अनुसार इसे बढा सकती है। नियम 8 में समिति के किसी भी सदस्य के इस्तीफे से इसकी सदस्यता में होने वाली या होने कि संभावना वाली रिक्तियों को भरने का प्रावधान है। नियम 9 कहता है कि यदि समिति का कोई सदस्य लगातार तीन बैठकों में भाग लेने में विफल रहता है तो वह उसका सदस्य नहीं रहेगा। नियम में आगे कहा गया है कि ऐसा सदस्य, यदि वह चाहता है, तो अपनी सदस्यता की बहाली के लिए एक निश्चित समय के भीतर आवेदन कर सकता है और बहाली की जा सकती है यदि अधिकांश सदस्य

संतुष्ट हैं कि बैठकों में भाग लेने में उनकी विफलता के लिए पर्याप्त कारण थे।

17 जनवरी, 1952 को राज्य के भीतर वस्त्र उद्योग से संबंधित न्यूनतम मजदूरी के निर्धारण के संबंध में जांच करने और मुख्य आयुक्त को सलाह देने के लिए एक समिति नियुक्त की गई थी। दस सदस्यों को नामित किया गया था, जिसमें नियोक्ताओं के चार प्रतिनिधि, चार कर्मचारी और दो स्वतंत्र सदस्य शामिल थे, जिनमें से एक श्री एनीगेरी को समिति के विशेषज्ञ सदस्य के रूप में कार्य करना था और दूसरे, डॉ बागची को इसके अध्यक्ष के रूप में कार्य करना था। सदस्यों का कार्यकाल 16 जुलाई, 1952 को समाप्त होने वाली अधिसूचना की तारीख से छः महीने का था। समिति की पहली बैठक 29 फरवरी, 1952 को हुई थी। विशेषज्ञ सदस्य उस बैठक में उपस्थित थे और यह संकल्प लिया गया था कि न्यूनतम मजदूरी न केवल जीवन के निर्वाह के लिए प्रदान की जानी चाहिए, बल्कि श्रमिक की दक्षता के रखरखाव के लिए पर्याप्त होनी चाहिए। दूसरी बैठक 29 मार्च, 1952 को और तीसरी बैठक 14 जून, 1952 को आयोजित की गई थी। विशेषज्ञ सदस्य पहली बैठक को छोड़कर किसी अन्य बैठक में उपस्थित नहीं थे और 27 मई, 1952 को उन्होंने मुख्य आयुक्त को एक पत्र लिखा जिसमें कहा गया कि वह 3 जून, 1952 को तीन महीने की अवधि के लिए यूरोप जा रहे हैं। उन्होंने सितंबर के पहले सप्ताह में यूरोप

से वापस आने के बाद रिपोर्ट तैयार करने में अध्यक्ष की सहायता करने की इच्छा व्यक्त की, बशर्ते समिति का कार्यकाल आगे बढ़ाया जाए। यदि यह संभव नहीं था, तो उन्होंने अनुरोध किया कि उनके पत्र को समिति की सदस्यता से इस्तीफे के पत्र के रूप में माना जा सकता है। ऐसा प्रतीत होता है कि पत्र मिलने पर कोई कार्रवाई नहीं की गई है। समिति की चौथी और पांचवीं बैठक क्रमशः 8 और 15 जुलाई, 1952 को आयोजित की गई थी। 20 अगस्त, 1952 को समिति के अध्यक्ष ने मुख्य आयुक्त को सूचित किया कि श्री अनिगेरी लगातार तीन बैठकों में भाग लेने में विफल रहने के कारण समिति के सदस्य नहीं रहे हैं। उन्होंने यह भी इच्छा व्यक्त की थी कि 27 मई, 1952 को मुख्य आयुक्त को लिखे उनके पत्र को इस्तीफे के पत्र के रूप में माना जाना चाहिए। इन परिस्थितियों में मुख्य आयुक्त से सदस्यता में इस रिक्ति को भरने का अनुरोध किया गया था। कहने का तात्पर्य यह है कि अगले ही दिन अर्थात् 21 अगस्त, 1952 को एक अधिसूचना जारी की गई जिसके द्वारा मुख्य आयुक्त ने समिति के कार्यकाल को 20 सितम्बर, 1952 तक बढ़ाने का आदेश दिया और उसके बाद 28 अगस्त को श्री अन्निगेरी को समिति के सदस्य के रूप में नियुक्त करने की एक और अधिसूचना जारी की गई। समिति का कार्यकाल 5 अक्टूबर, 1952 तक एक और अधिसूचना द्वारा बढा दिया गया था। इसी बीच 10 सितम्बर, 1952 को समिति की एक बैठक हुई, जिसमें श्री

अन्निगेरी उपस्थित नहीं थे। पारित एकमात्र प्रस्ताव यह था कि सभी संबंधित कागजात श्री एनीगेरी को उनकी इच्छा के अनुसार भेजे जाएं। ऐसा प्रतीत होता है कि 14 सितम्बर, 1952 के कुछ समय बाद सभापति स्वयं कागजातों को नागपुर ले गए जहां श्री अन्निगेरी रह रहे थे और अध्यक्ष द्वारा विशेषज्ञ सदस्य के परामर्श से अंतिम रिपोर्ट का मसौदा तैयार किया गया और दोनों ने नागपुर में रिपोर्ट पर हस्ताक्षर किए। यह रिपोर्ट 4 अक्टूबर, 1952 को अन्य सदस्यों के समक्ष रखी गई और 7 अक्टूबर, 1952 को मुख्य आयुक्त के सचिव के हस्ताक्षर से अजमेर राज्य में वस्त्र उद्योग में कर्मचारियों के लिए मजदूरी की न्यूनतम दरों को निर्धारित करने के लिए एक अधिसूचना जारी की गई और कहा गया कि इन दरों को 1 सितम्बर, 1952 से लागू माना जाना चाहिए।

इस अधिसूचना से व्यथित महसूस करते हुए तीनों अपीलकर्ताओं ने 1954 की अपील संख्या 138 में 31 अक्टूबर, 1952 को अजमेर के न्यायिक आयुक्त के समक्ष संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत एक आवेदन प्रस्तुत किया, जिसमें अजमेर राज्य को इसे लागू नहीं करने का आदेश देने के लिए परमादेश की प्रकृति में एक रिट के लिए प्रार्थना की गई। इसी तरह का एक आवेदन 6 नवंबर, 1952 को एक अन्य अपील में अपीलकर्ता बिजय कॉटन मिल्स द्वारा दायर किया गया था। दोनों याचिकाओं पर एक साथ सुनवाई की गई और 16 फरवरी, 1953 को

न्यायिक आयुक्त द्वारा एक आम निर्णय पारित किया गया। इन आवेदनों को इस आधार पर खारिज कर दिया गया था कि मुख्य आयुक्त को 7 अक्टूबर, 1952 की अधिसूचना को पूर्वव्यापी प्रभाव से लागू करने में अपने कानूनी अधिकार का उल्लंघन करने वाला माना गया था और अजमेर राज्य को 8 जनवरी, 1953 से पहले किसी भी तारीख से अधिसूचना लागू करने से रोक दिया गया था। इस निर्णय के विरुद्ध न्यायिक आयुक्त, अजमेर द्वारा प्रदान किए गए प्रमाण-पत्रों के आधार पर ये दोनों अपीलें इस न्यायालय में आई हैं।

अपील संख्या 138 में अपीलकर्ताओं की ओर से पेश श्री चटर्जी ने अपने मुवक्किलों की ओर से तीन गुना तर्क पेश किया है। उन्होंने तर्क दिया है कि संविधान के अनुच्छेद 239 के तहत राष्ट्रपति द्वारा अधिकार के प्रत्यायोजन के बिना, अजमेर के मुख्य आयुक्त न्यूनतम मजदूरी अधिनियम के प्रयोजनों के लिए "उपयुक्त सरकार" के रूप में कार्य करने के लिए सक्षम नहीं थे। इसलिए 7 अक्टूबर, 1952 को अंतिम अधिसूचना जारी करने सहित अधिनियम के उपबंधों के अंतर्गत मुख्य आयुक्त द्वारा उठाए गए सभी कदम अवैध और अधिकारहीन थे।

दूसरा तर्क यह है कि अधिनियम की धारा 27 का प्रावधान अवैध और गैर-कानूनी है क्योंकि यह अधिनियम में परिभाषित "उपयुक्त सरकार" के पक्ष में विधायिका द्वारा विधायी शक्तियों के अवैध और असंवैधानिक

प्रत्यायोजन के बराबर है। तीसरा और अंतिम विवाद यह है कि मुख्य आयुक्त के पास 16 जुलाई, 1952 को सलाहकार समिति का कार्यकाल समाप्त होने के बाद पूर्वव्यापी प्रभाव से इसे बढाने का कोई अधिकार नहीं था।

दूसरी अपील के समर्थन में पेश हुए श्री सीरवई ने अपने मुवक्किल की ओर से इन सभी दलीलों को स्वीकार कर लिया। हालांकि, उन्होंने न्यूनतम मजदूरी अधिनियम की संवैधानिक वैधता पर इस आधार पर आपत्ति लगाते हुए कुछ अतिरिक्त बिंदु उठाए कि इसके प्रावधान संविधान के अनुच्छेद 19 (1) (जी) के तहत गारंटीकृत अपीलकर्ताओं और उसके कर्मचारियों के मौलिक अधिकारों के साथ विरोधाभासी हैं। बिजय कॉटन मिल्स लिमिटेड और उनके तहत कई कर्मचारियों की ओर से संविधान के अनुच्छेद 32 के तहत दायर दो याचिकाओं के संबंध में विद्वान वकील द्वारा इन बिंदुओं पर विस्तार से बहस की गई थी और हम इन याचिकाओं से निपटने के दौरान उन्हें विचार के लिए लेंगे। अब हम ऊपर उल्लेखित तीन बिंदुओं पर विचार करने के लिए आगे बढ़ेंगे जो अपीलों के समर्थन में उठाए गए हैं।

जहां तक प्रथम आधार का संबंध है, श्री चटर्जी का तर्क यह है कि न्यूनतम मजदूरी अधिनियम की धारा 2(ख) (पप) में उपयुक्त सरकार शब्द को परिभाषित किया गया है, जिसका अर्थ किसी अनुसूचित रोजगार के

संबंध में है, जो केन्द्र सरकार, राज्य सरकार द्वारा या उसके प्राधिकार के अधीन नहीं किया गया है। सामान्य खंड अधिनियम की धारा 3(60) में "राज्य सरकार" को इस रूप में परिभाषित किया गया है, जिसका अर्थ है कि भाग ग राज्य, केंद्र सरकार में संविधान के प्रारंभ होने के बाद किए गए या किए जाने वाले किसी भी कार्य के संबंध में। संविधान के प्रारंभ होने से पहले, भारत सरकार अधिनियम, 1935 की धारा 94 (3) के तहत, एक मुख्य आयुक्त के प्रांत को गवर्नर जनरल द्वारा प्रशासित किया जा सकता था, जो कि वह उचित समझता था, एक मुख्य आयुक्त के माध्यम से जो वह अपने विवेक से नियुक्त किया जाएगा; और सामान्य खंड अधिनियम की धारा 3 (8) के तहत, जैसा कि यह 26 जनवरी, 1950 से पहले था, "केंद्र सरकार" शब्द में मुख्य आयुक्त के प्रांत के मामले में, भारत सरकार अधिनियम, 1935 की धारा 94 (3) के तहत उसे दिए गए अधिकार के दायरे में कार्य करने वाले मुख्य आयुक्त शामिल थे। संविधान का अनुच्छेद 239, जो भारत सरकार अधिनियम की धारा 94(3) से मेल खाता है, हालांकि इसका दायरा बहुत व्यापक है, यह प्रावधान करता है कि पहली अनुसूची के भाग ग में विर्निदिष्ट राज्य का प्रशासन राष्ट्रपति द्वारा किया जाएगा, जो उस सीमा तक कार्य करेगा, जो उसके द्वारा नियुक्त किए जाने वाले मुख्य आयुक्त या उप-राज्यपाल के माध्यम से या पड़ोसी राज्य की सरकार के माध्यम से नियुक्त किया जाएगा। अनुकूलन विधि

आदेश, 1950 द्वारा यथासंशोधित सामान्य खंड अधिनियम की धारा 3(8)(ख)(पप) में इस संवैधानिक उपबंध से सहमति व्यक्त करते हुए यह प्रावधान किया गया है कि केन्द्र सरकार में अन्य बातों के साथ-साथ भाग ग राज्य का मुख्य आयुक्त शामिल होगा जो संविधान के अनुच्छेद 239 के अधीन उसे दिए गए प्राधिकार के दायरे में कार्य करेगा। अजमेर भारत सरकार अधिनियम, 1935 की धारा 94 (1) के तहत एक मुख्य आयुक्त का प्रांत था। संविधान लागू होने के बाद यह पार्ट सी राज्य बन गया है। जैसा कि पहले ही कहा जा चुका है, केन्द्र सरकार ने भारत सरकार अधिनियम की धारा 94(3) के अंतर्गत 16 मार्च, 1949 को एक अधिसूचना जारी की, जिसमें यह निदेश दिया गया कि न्यूनतम मजदूरी अधिनियम के अंतर्गत किसी भी मुख्य आयुक्त के प्रांत के संबंध में "उपयुक्त सरकार" का कार्य मुख्य आयुक्त द्वारा किया जाएगा। हालांकि, संविधान लागू होने के बाद संविधान के अनुच्छेद 239 के तहत अधिकार का ऐसा कोई प्रत्यायोजन नहीं था। श्री चटर्जी का तर्क है कि अनुच्छेद 239 के तहत ऐसे प्रतिनिधिमंडल की अनुपस्थिति में अजमेर के मुख्य आयुक्त को "केंद्र सरकार" के रूप में नहीं माना जा सकता है जैसा कि सामान्य खंड अधिनियम की धारा 3 (8) (बी) (पप) में परिभाषित किया गया है और परिणामस्वरूप उन्हें न्यूनतम मजदूरी अधिनियम की धारा 2 (बी) (पप) के अर्थ के भीतर "उपयुक्त सरकार" नहीं माना जा सकता है।

ऐसा कहा जाता है कि भारत सरकार अधिनियम, संविधान के अनुच्छेद 395 द्वारा निरस्त कर दिया गया है। भारत सरकार अधिनियम की धारा 94 (3) के तहत जारी एक आदेश संभवतः संविधान के उद्घाटन के बाद लागू नहीं हो सकता है, न ही इसे संविधान के अनुच्छेद 239 के तहत किया गया आदेश माना जा सकता है।

यह विवाद हमें ठोस प्रतीत नहीं होता है। हमारी राय में, संविधान के अनुच्छेद 372 के खंड (1) और (2) के प्रावधानों द्वारा इस तर्क का पूरा जवाब दिया गया है। अनुच्छेद 372 निम्नानुसार है।

372(1) अनुच्छेद 395 में निर्दिष्ट अधिनियमों के इस संविधान द्वारा निरसन किए जाने के बावजूद, लेकिन इस संविधान के अन्य उपबंधों के अधीन रहते हुए, इस संविधान के प्रारंभ से ठीक पहले भारत के राज्यक्षेत्र में लागू सभी कानून तब तक लागू रहेंगे जब तक कि किसी सक्षम विधानमंडल या अन्य सक्षम प्राधिकारी द्वारा परिवर्तित या निरसन या संशोधन नहीं किया जाता।

(2) भारत के राज्यक्षेत्र में लागू किसी विधि के उपबन्धों को इस संविधान के उपबन्धों के अनुरूप लाने के प्रयोजन से, राष्ट्रपति आदेश द्वारा ऐसी विधि के ऐसे अनुकूलन और संशोधन कर सकेगा, चाहे वह निरसन या संशोधन के द्वारा, जो आवश्यक या समीचीन हो, और यह उपबंध कर सकेगा कि विधि आदेश में निर्दिष्ट की गई तारीख से, इस

तरह किए गए अनुकूलन और संशोधनों के अधीन प्रभावी होगा, और इस तरह के किसी भी अनुकूलन या संशोधन पर कानून की किसी भी अदालत में सवाल नहीं उठाया जाएगा।

इस प्रकार अनुच्छेद के खंड (1) में अनुच्छेद 395 में उल्लिखित अधिनियमों के संविधान द्वारा निरसन किए जाने के बावजूद मौजूदा विधियों को जारी रखने का प्रावधान है और खंड (2) उन्हें संविधान के प्रावधानों के अनुरूप लाने की दृष्टि से उनके अनुकूलन का प्रावधान करता है। भारत सरकार अधिनियम, 1935, निस्संदेह संविधान के अनुच्छेद 395 द्वारा निरस्त कर दिया गया है, लेकिन इसके तहत बनाए गए कानून जो संविधान के प्रारंभ होने से ठीक पहले अस्तित्व में थे, अनुच्छेद 372 (1) के तहत जारी रहेंगे और उस अनुच्छेद के दूसरे खंड के तहत अनुकूलित किए जा सकते हैं। श्री चटर्जी का तर्क है कि अनुच्छेद 372 का वर्तमान मामले में कोई प्रभाव नहीं है क्योंकि भारत सरकार अधिनियम की धारा 94 (3) के तहत केंद्र सरकार द्वारा किए गए आदेश को अनुच्छेद 372 के अर्थ के भीतर "लागू कानून" के रूप में नहीं माना जा सकता है। विद्वान वकील द्वारा अनुच्छेद 366 (10) में परिभाषित "कानून कानून" और "लागू कानून" के बीच अंतर करने की मांग की जाती है और यह तर्क दिया जाता है कि यद्यपि एक "आदेश" "मौजूदा कानून" की परिभाषा के भीतर आ सकता है, लेकिन इसे अनुच्छेद 372 में उपयोग किए गए "लागू कानून"

अभिव्यक्ति के भीतर शामिल नहीं किया जा सकता है। आगे यह तर्क दिया जाता है कि भले ही "कानून" शब्द एक आदेश को शामिल करने के लिए पर्याप्त व्यापक हो, वह आदेश एक विधायी होना चाहिए और एक प्रशासनिक प्राधिकरण द्वारा प्रख्यापित केवल एक कार्यकारी आदेश नहीं होना चाहिए, और इस तर्क के समर्थन में विद्वान वकील ने प्रिवी काउंसिल और भारत के विभिन्न उच्च न्यायालयों द्वारा तय किए गए कई मामलों पर भरोसा किया है।

पहला बिंदु हमें बहुत प्रभावित नहीं करता है और हमें नहीं लगता कि "एक मौजूदा कानून" और "लागू कानून" के बीच कोई भौतिक अंतर है। संविधान के अनुच्छेद 366 (10) के अलावा, "भारतीय कानून" शब्द को स्वयं सामान्य खंड अधिनियम की धारा 3 (29) में परिभाषित किया गया है, जिसका अर्थ है कोई भी अधिनियम, अध्यादेश, विनियमन, नियम, आदेश, या उप-कानून जो संविधान के प्रारंभ से पहले भारत के किसी भी प्रांत या उसके हिस्से में कानून का प्रभाव था। हमारी राय में, अनुच्छेद 372 में प्रयुक्त शब्द "लागू कानून" न केवल एक विधायी अधिनियमन बल्कि किसी भी विनियमन या आदेश को शामिल करने के लिए पर्याप्त व्यापक हैं जिसमें कानून का बल है। हम श्री चटर्जी से सहमत हैं कि कोई आदेश कानून की परिभाषा के भीतर आने से पहले विधायी होना चाहिए न कि एक निष्पादनात्मक आदेश। हम उनसे सहमत नहीं हैं, हालांकि भारत

सरकार अधिनियम की धारा 94(3) के तहत वर्तमान मामले में गवर्नर-जनरल द्वारा दिया गया आदेश केवल एक कार्यकारी आदेश है। भारत सरकार अधिनियम, 1935 का भाग प्ट, जो धारा 94 से शुरू होता है, मुख्य आयुक्तों के प्रांतों से संबंधित है और उप-धारा (3) यह निर्धारित करती है कि मुख्य आयुक्त के प्रांत को कैसे प्रशासित किया जाएगा। इसमें यह प्रावधान है कि इसे गवर्नर-जनरल द्वारा प्रशासित किया जाएगा जो मुख्य आयुक्त के माध्यम से ऐसे ई-एक्सटेंट के माध्यम से कार्य करेगा जो वह उचित समझता है। धारा 94 (3) के तहत गवर्नर-जनरल द्वारा मुख्य आयुक्त को किसी प्रांत को प्रशासित करने का अधिकार देने के लिए किया गया आदेश वास्तव में एक कानूनी प्रावधान की प्रकृति में है जो उस प्रांत के संबंध में मुख्य आयुक्त के अधिकारों और शक्तियों को परिभाषित करता है। हमारी राय में इस तरह का आदेश संविधान के अनुच्छेद 372 के दायरे में आता है और संविधान के प्रारंभ होने से ठीक पहले "लागू कानून" होने के नाते अनुच्छेद के खंड (1) के तहत लागू रहेगा। इस दृष्टिकोण से सहमत होकर यह भी माना जाना चाहिए कि ऐसा आदेश अनुच्छेद 372 के खंड (2) के तहत संवैधानिक प्रावधानों के अनुरूप लाने के लिए अनुकूलन करने में सक्षम है और कानून के अनुकूलन आदेश, 1950 द्वारा ठीक यही किया गया है। आदेश का पैराग्राफ 26 इस प्रकार हैः

"जहां भारत सरकार अधिनियम, 1935 के किसी प्रावधान के तहत कोई नियम, आदेश या अन्य लिखत लागू था, या नियत दिन से ठीक पहले उस अधिनियम में संशोधन या पूरक करने वाले किसी अधिनियम के तहत, और ऐसा प्रावधान संविधान में संशोधनों के साथ या बिना फिर से अधिनियमित किया जाता है, तो उक्त नियम, आदेश या लिखत, जहां तक लागू हो, नियत दिन से आवश्यक संशोधनों के साथ लागू रहें जैसे कि यह संविधान के उक्त प्रावधान के तहत उपयुक्त प्राधिकारी द्वारा विधिवत रूप से बनाया गया एक नियम, आदेश या साधन था, और तदनुसार इसे बदला या रद्द किया जा सकता है।

इस प्रकार भारत सरकार अधिनियम की धारा 94 (3) के तहत किए गए आदेश को अब संविधान के अनुच्छेद 239 के तहत किए गए आदेश के रूप में माना जाना चाहिए और हम श्री चटर्जी से सहमत होने में असमर्थ हैं कि ऊपर उल्लिखित अनुकूलन आदेश बनाना अनुच्छेद 372 के खंड (2) के तहत राष्ट्रपति की क्षमता से परे था। इसलिए श्री चटर्जी का पहला तर्क विफल हो जाता है।

अब दूसरे मुद्दे पर आते हैं। श्री चटर्जी बताते हैं कि न्यूनतम मजदूरी अधिनियम की प्रस्तावना और साथ ही इसके शीर्षक से स्पष्ट रूप से संकेत मिलता है कि विधायिका का इरादा केवल कुछ रोजगारों में न्यूनतम मजदूरी निर्धारित करने का प्रावधान करना था और विधायिका का

यह इरादा नहीं था कि सभी रोजगारों को अधिनियम के दायरे में लाया जाना चाहिए। अधिनियम से जुड़ी अनुसूची में रोजगारों की एक सूची दी गई है और अनुसूचित रोजगारों के संबंध में न्यूनतम मजदूरी निर्धारित की जानी है। तथापि, अधिनियम की धारा 27 के अधीन उपयुक्त सरकार को यह शक्ति प्रदान की गई है कि वह अनुसूची के किसी भी भाग में ऐसे किसी रोजगार को जोड़ सकती है जिसके संबंध में उसकी राय है कि न्यूनतम मजदूरी किसी विशेष रीति से अधिसूचना देकर निर्धारित की जाएगी और उसके बाद अनुसूची राज्य को अपने आवेदन में, तदनुसार संशोधित माना जाए। यह तर्क दिया जाता है कि अधिनियम कहीं भी एक विधायी नीति नहीं बनाता है जिसके अनुसार अनुसूची में शामिल होने के लिए एक रोजगार चुना जाएगा। कोई सिद्धांत निर्धारित नहीं हैं और कोई मानक निर्धारित नहीं है जो चयन करने में प्रशासनिक प्राधिकरण को एक बुद्धिमान मार्गदर्शन प्रदान कर सके। इस मामले को पूरी तरह से "उपयुक्त सरकार" के विवेक पर छोड़ दिया गया है जो अपनी पसंद के किसी भी तरीके से अनुसूची में संशोधन कर सकती है और इस तरह की शक्ति का प्रत्यायोजन वस्तुतः विधायिका द्वारा अपने आवश्यक विधायी कार्य के आत्मसमर्पण के समान है और इसे वैध नहीं ठहराया जा सकता है।

निस्संदेह अधिनियम की धारा 27 के प्रावधान में प्रत्यायोजन का एक तत्व निहित है, क्योंकि विधायिका एक अर्थ में, अपने द्वारा विनिर्दिष्ट

किसी अन्य निकाय को कुछ ऐसा करने के लिए अधिकृत करती है जो वह स्वयं कर सकता है, लेकिन ऐसा प्रतिनिधिमंडल, यदि इसे कहा ही जा सकता है, तो वर्तमान मामले की परिस्थितियों में हमें अनुचित और असंवैधानिक प्रतीत नहीं होता है। बैक्सटर बनाम आह वे (1) के मामले में ऑस्ट्रेलिया के उच्च न्यायालय के न्यायमूर्ति ओ'कॉनर जे द्वारा कहा गया थाः

"सभी विधानमण्डलो का उद्देश्य भविष्य में जहां तक संभव हो अपने दिमाग से योजना बनाना है, और कानून के लागू होने में उत्पन्न होने वाली सभी आकस्मिकताओं के लिए यथासंभव सामान्य रूप से प्रदान करना है। लेकिन सभी मामलों के लिए विशेष रूप से प्रावधान करना संभव नहीं है और इसलिए, बहुत शुरुआती समय से, और विशेष रूप से आधुनिक समय में, कानून ने सशर्त कानून का रूप ले लिया है, यह निर्धारित करने के लिए कुछ निर्दिष्ट प्राधिकरण पर छोड़ दिया है कि कानून किन परिस्थितियों में लागू किया जाएगा, या इसके संचालन को किस तक बढ़ाया जाएगा। या व्यक्तियों या वस्तुओं का विशेष वर्ग जिस पर इसे लागू किया जाएगा।

इस ऑस्ट्रेलियाई मामले के तथ्य, भौतिक विशेषताओं में, वर्तमान के साथ एक आश्चर्यजनक समानता रखते हैं। उस मामले में उठाया गया प्रश्न 1901 के सीमा शुल्क अधिनियम के कुछ प्रावधानों की वैधता से संबंधित

था। इस अधिनियम ने कुछ वस्तुओं के आयात पर प्रतिबंध लगा दिया, जिनका विशेष रूप से उल्लेख किया गया था और फिर परिषद में गवर्नर-जनरल को घोषणा द्वारा अन्य सामान भी निषिद्ध सूची के भीतर शामिल करने की शक्ति दी गई थी। प्रावधान की वैधता को इस आधार पर चुनौती दी गई थी कि यह विधायी शक्तियों का अनुचित प्रत्यायोजन है। इस तर्क को खारिज कर दिया गया था और यह माना गया था कि यह विधायी शक्ति के प्रत्यायोजन का मामला नहीं था, बल्कि उस प्रकार के सशर्त कानून का मामला था जिसे रेग बनाम बुराह (1) के मामले में प्रिवी काउंसिल द्वारा वैध ठहराया गया था। यह वास्तव में इंगित किया जा सकता है कि बुराह के मामले में उपराज्यपाल के पास जो छोड़ दिया गया था, वह अपने विकल्प पर कुछ क्षेत्रों में एक अधिनियम के प्रावधानों को लागू करने की शक्ति थी और इन क्षेत्रों को भी अधिनियम में निर्दिष्ट किया गया था। इसलिए कहा जा सकता है कि विधायिका ने विशेष स्थानों पर कानून के अनुप्रयोग के सवाल पर अपना दिमाग लगाया था और केवल यह निर्धारित करने के लिए कार्यपालिका पर छोड़ दिया गया था कि उन स्थानों पर कानूनकब लागू किए जाएंगे। ऑस्ट्रेलिया के उच्च न्यायालय के अनुसार, यही सिद्धांत तब भी लागू होगा जब कार्यकारी को यह निर्धारित करने की शक्ति दी जाती है कि कानून को विशेष रूप से उल्लिखित लोगों के अलावा किन अन्य व्यक्तियों या वस्तुओं तक बढ़ाया जाएगा। क्या इस

तरह का प्रावधान सख्ती से "सशर्त कानून" कहे जाने वाले विवरण के भीतर आता है, यह बहुत ठोस नहीं है। प्रश्न यह है कि क्या यह अनुमेय प्रत्यायोजन की सीमाओं का उल्लंघन करता है। जैसा कि ओ'कॉनर जे ने उपरोक्त मामले में स्वयं कहा था, जब किसी विधायिका को किसी विशेष विषय पर कानून बनाने की पूर्ण शक्ति दी जाती है, तो ऐसी शक्ति के विस्तार के लिए प्रासंगिक कानून बनाने की एक निहित शक्ति भी होनी चाहिए। यह संवैधानिक कानून का एक मौलिक सिद्धांत है कि किसी शक्ति के विस्तार के लिए आवश्यक हर चीज को शक्ति के अनुदान में शामिल किया जाता है। एक विधायिका निश्चित रूप से अपने आवश्यक कार्यों से खुद को अलग नहीं कर सकती है और इसे एक बाहरी प्राधिकारी पर निहित नहीं कर सकती है। कानून बनाने के प्राथमिक कर्तव्य का निर्वहन स्वयं विधायिका द्वारा किया जाना चाहिए, लेकिन प्रतिनिधिमंडल को एक सहायक या सहायक उपाय के रूप में सहारा लिया जा सकता है। श्री चटर्जी का तर्क है कि आवश्यक विधायी कार्य एक नीति निर्धारित करना और इसे आचरण का बाध्यकारी नियम बनाना है। उनका कहना है कि यह विधायी नीति में कहीं भी दिखाई नहीं देती है। इस अधिनियम के प्रावधान और इसके परिणामस्वरूप सहायक विधायी शक्तियों के विस्तार में प्रशासनिक प्राधिकरण का मार्गदर्शन करने के लिए कोई मानक या मानदंड नहीं है। हमें नहीं लगता कि यह सही दृष्टिकोण है। वर्तमान अधिनियमन

के चेहरे पर विधायी नीति स्पष्ट है। इसका उद्देश्य न्यूनतम मजदूरी का सांविधिक निर्धारण करना है ताकि श्रम के दोहन की संभावना को रोका जा सके। विधायिका निस्संदेह इस अधिनियम को सभी उद्योगों पर लागू नहीं करना चाहती थी बल्कि केवल उन उद्योगों पर लागू करना चाहती थी जहां असंगठित श्रम के कारण या मजदूरी के प्रभावी विनियमन के लिए उचित व्यवस्था के अभाव में या अन्य कारणों से किसी विशेष उद्योग में मजदूरों की मजदूरी बहुत कम थी। इन तथ्यों को ध्यान में रखते हुए कि इस अधिनियम से संलग्न अनुसूची में व्यापारों की सूची तैयार की गई है, लेकिन यह सूची कोई काल्पनिक नहीं है और यह विधायिका की नीति है कि वह एक बार में और सभी समय के लिए निर्धारित न करे कि यह अधिनियम किन उद्योगों पर लागू किया जाना चाहिए। श्रम की स्थितियां अलग-अलग परिस्थितियों में और एक राज्य से दूसरे राज्य में भिन्न होती हैं और अनुसूची के भीतर किसी विशेष व्यापार या उद्योग को शामिल करने की योग्यता विभिन्न तथ्यों पर निर्भर करती है जो किसी भी तरह से समान नहीं हैं और जिन्हें उस व्यक्ति द्वारा सबसे अच्छा पता लगाया जा सकता है जिसे किसी विशेष राज्य के प्रशासन का प्रभारी रखा गया है। इस अधिनियम के उद्देश्यों को प्रभावी ढंग से पूरा करने के लिए यह शक्ति "उपयुक्त सरकार" को दी गई है। कि वह स्थानीय परिस्थितियों के संदर्भ में यह निर्णय ले सके कि क्या वह वांछनीय है कि किसी विशेष व्यापार या

उधोग के संबंध में न्यूनतम मजदूरी निर्धारित की जानी चाहिए जो पहले से ही सूची में शामिल नहीं है। हमें नहीं लगता कि धारा 27 को अधिनियमित करने में विधायिका ने किसी भी तरह से अपनी आवश्यक शक्तियों को छीन लिया है या प्रशासनिक प्राधिकरण को एक सहायक या अधीनस्त शक्ति के अलावा कुछ भी साैंपा है जिसे अधिनियम के उद्देश्य और नीति को पूरा करने के लिए आवश्यक समझा गया था। इसलिए श्री चटर्जी का दूसरा तर्क सफल नहीं हो सकता।

श्री चटर्जी द्वारा उठाया गया तीसरा और अंतिम मुद्दा मुख्य आयुक्त की उस अधिसूचना के विरुद्ध है जिसके द्वारा उन्होंने सलाहकार समिति का कार्यकाल 20 सितम्बर, 1952 तक बढ़ा दिया था। यह तर्क दिया जाता है कि समिति का कार्यकाल, जैसा कि मूल रूप से निर्धारितकिया गया था, 16 जुलाई, 1952 को समाप्त हो गया, और 17 जुलाई को और 17 जुलाई से समिति के सभी सदस्य पदेन हो गए। इसलिए आयुक्त उस समिति को नया जीवन देने के लिए सक्षम नहीं थे जो पहले ही मर चुकी थी। हमें नहीं लगता कि इस विवाद में ज्यादा दम है। अधिनियम की धारा 30 के तहत बनाए गए नियमों के नियम 3 में स्पष्टरूप से कहा गया है कि राज्य सरकार समिति के गठन के समय उसका कार्यकाल निर्धारित कर सकती है और परिस्थितियों की आवश्यकता के अनुसार समय समय पर इसका विस्तार कर सकती है। इसलिए राज्य

सरकार को यह अधिकार था कि वह समिति के कार्यकाल को अपनी इच्छानुसार विस्तार कर सकती है। एकमात्र सवाल यह है कि क्या यह मूल रूप से निर्धारित अवधि समाप्त होने के बाद ऐसा कर सकता है। श्री चटर्जी ने इस संबंध में कुछ मामलों पर भरोसा किया जिसमें कहा गया था कि न्यायालय निर्णय दायर किए जाने के बाद मध्यस्थता कार्यवाही में समय विस्तार का अनुदान नहीं दे सकता है और निर्धारित अवधि के बाद दिया गया निर्णय शून्य है। हमारी राय में यह सादृश्य वर्तमान मामले में अपीलकर्ताओं के लिए बिल्कुल भी सहायक नहीं है। यह विवादित नहीं है कि समिति ने 16 जुलाई, 1952 के बाद और 21 अगस्त, 1952 से पहले कोई काम नहीं किया जब इसका कार्यकाल बढ़ाया गया था। इस अवधि के दौरान कोई रिपोर्ट प्रस्तुत नहीं की गई थी और रिपोर्ट प्रस्तुत किए जाने के बाद समय का कोई विस्तार नहीं किया गया था। यह मानते हुए कि 21 अगस्त, 1952 का आदेश एक ऐसी समिति को पुनर्जीवित नहीं कर सकता है जो पहले ही मर चुकी थी, यह निश्चित रूप से माना जा सकता है कि उस तारीख को एक नई समिति का गठन किया गया था और तब भी उसके द्वारा प्रस्तुत रिपोर्ट पूरी तरह से अच्छी रिपोर्ट होगी। इसके अलावा, यह ध्यान दिया जाना चाहिए कि अधिनियम की धारा 5 के तहत नियुक्त एक समिति केवल एक सलाहकार निकाय है और सरकार इसकी किसी भी सिफारिश को स्वीकार करने के लिए बाध्य नहीं है। नतीजतन, इस चरित्र

की प्रक्रियात्मक अनियमितताएं अंतिम रिपोर्ट को प्रभावित नहीं कर सकीं, जिसने न्यूनतम मजदूरी को निर्धारित किया। हमारी राय में, इन अपीलों के समर्थन में उठाए गए तर्कों में से कोई भी सफल नहीं हो सकता है और इसलिए दोनों अपीलों को विफल होना चाहिए और लागत के साथ खारिज कर दिया जाना चाहिए।

अपील खारिज कर दी गई।

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल 'सुवास' की सहायता से अनुवादक न्यायिक अधिकारी श्री पंकज कुमार काबरा आर जे एस द्वारा किया गया है।

अस्वीकरण: यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।